ग्रामीण समाज और अंतर्राष्ट्रीय स्कूल में आधुनिक शिक्षा

मनीष*

परिवर्तन प्रकृति का नियम है, सामाजिक परिवर्तन इस परिवर्तन का हिस्सा है। आज, पूरे भारत में शहरीकरण की प्रक्रिया बढ़ रही है। यह भी माना जाता है कि 2040 तक देश की आधी आबादी शहरीकरण के अंतर्गत आ जाएगी। शिक्षा क्षेत्र भी सामाजिक परिवर्तन से प्रभावित हो रहा है। नए शहरीकृत या 'रुर्बन' क्षेत्रों में 'अंतर्राष्ट्रीय स्कूल' बड़े स्तर पर खुल रहे हैं। ये स्कूल दावा करते हैं कि वे 'आधुनिक' शिक्षा प्रदान करते हैं। माता-पिता भी अपने बच्चों को इन स्कूलों में भेजने में रुचि रखते हैं। लेकिन इस बात को अनदेखा किया जा रहा है कि बच्चों को दो अलग-अलग दुनिया में रहना पड़ रहा है (यानी उनका स्वयं का सामाजिक-सांस्कृतिक जीवन और स्कूल का जीवन)। यह अध्ययन ग्रामीण बच्चों की अस्मिता के निर्माण की प्रक्रिया को समझने के लिए किया गया है, जहाँ बच्चा घर पर और स्कूल में, दो अलग-अलग जीवन जी रहा है। इस शोध में यह परखने का प्रयास किया गया कि बच्चा आधुनिकता के मूल्यों को कैसे समझता है। इसके परिणाम उत्तरदाताओं की प्रतिक्रिया पर आधारित हैं। शोधक द्वारा विकसित साक्षात्कार अनुसूची का उपयोग करके बच्चों के विचार एकत्र किए गए थे। अध्ययन के नतीजे बताते हैं कि स्कूल और बच्चे के सामाजिक अनुभवों के बीच एक विरोधाभास है, जो आधुनिकता से जुड़े मूल्यों और बच्चे के सामाजिक-सांस्कृतिक संदर्भ के बीच संभावित तनाव के संदर्भ में बच्चे की अस्मिता के संकट का कारण बनता है। यह भी पाया गया कि 'अंतर्राष्ट्रीय स्कूल' इस तरह के विरोधाभास में प्रमुख भूमिका निभाते हैं।

प्रस्तावना

समाज गतिशील है, जिसमें परिवर्तन अवश्यंभावी है। यदि हम समाज में सामंजस्य और निरंतरता को बनाए रखना चाहते हैं तो हमें यथास्थिति अपने व्यवहार को परिवर्तनशील बनाना ही होगा। यदि ऐसा न होता तो मानव समाज की इतनी प्रगति संभव नहीं होती। निश्चित और निरंतर परिवर्तन मानव समाज की विशेषता है। शहरीकरण इस सामाजिक परिवर्तन का ज़रिया है। भारत में शहरी भारत की विकास दर ग्रामीण भारत की विकास दर से वास्तविक अर्थों में ज़्यादा है। सन् 2001–2011 के दशक में शहरी भारत ने अपनी आबादी में 9.1 करोड़ लोगों को जोड़ा, जबकि ग्रामीण भारत ने उसी अवधि में 9 करोड़ लोगों को जोड़ा। भारत में शायद ही ऐसा कोई क्षेत्र हो, जहाँ शहरीकरण की प्रक्रिया शुरू न हुई हो। शिक्षा समाज का एक पक्ष है। शिक्षा और समाज एक-दूसरे को प्रभावित करते हैं। सामाजिक परिवर्तन का प्रभाव शिक्षा पर आसानी से देखा जा सकता है।

**शोधार्थी*, केन्द्रीय शिक्षा संस्थान, शिक्षा विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली – 110 007

आज भारत में निजी विद्यालयों की संख्या बढ़ती ही जा रही है। इन्हीं में 'इंटरनेशनल' या 'ग्लोबल' या 'वर्ल्ड' स्कूल कहे जाने वाले विद्यालय विभिन्न क्षेत्रों में देखे जा सकते हैं। स्वयं को आधुनिक और प्रगतिशील कहने वाले ये विद्यालय गाँव के बच्चों (जो इन विद्यालयों में पढ़ते हैं) के सीखने की प्रक्रिया, उनकी अस्मिता, सामाजिकता और आधुनिकता के विचारों को किस प्रकार प्रभावित कर रहे हैं, यह जानना इस शोध का विषय था। ऐसे 'अंतर्राष्ट्रीय' विद्यालय सही मायनों में अंतर्राष्ट्रीय स्तर के विद्यालय नहीं हैं, बल्कि ये केवल व्यापारिक विद्यालय हैं, जो सिर्फ़ नाम का दोहन करके अधिक फ़ीस लेना या एक पूरी आवासीय व्यवस्था चलाकर अपने व्यवसाय को बनाए हुए हैं। विभिन्न क्षेत्रों के नवधनिक वर्ग के इन विद्यालयों के नाम आकर्षित होते हैं, क्योंकि 'अंतर्राष्ट्रीय' या 'ग्लोबल' का अर्थ ही उन्हें पश्चिमी देशों की शिक्षा एवं संस्कृति के करीब ले जाता है।

इस शोध का औचित्य यही है कि इन दो दुनिया (एक बच्चे का परिवेश, दूसरा वह 'अंतर्राष्ट्रीय विद्यालय') में रह रहे बच्चों की अस्मिता निर्माण और उनकी शिक्षा का आधुनिकता के नज़रिए से अध्ययन करना। इस विषय में शोधक की रुचि तब जाग्रत हुई, जब मैंने अपने आस-पास ऐसे बच्चों को देखा, जो गाँव में तो रहते हैं, लेकिन उनकी औपचारिक शिक्षा गाँव से इतर एक अलग शहरी परिवेश में 'इंटरनेशनल' कहलाए जाने वाले निजी विद्यालयों में हो रही है। हाल के दिनों में शोधक के गाँव (पश्चिमी दिल्ली के हिरनकूदना गाँव) में ज़मीन बिकने से कुछ लोगों की आर्थिक स्थिति में बहुत बदलाव आया है, जिसके चलते उन्होंने अपने बच्चों को इन निजी और महंगे विद्यालयों में पढ़ाना शुरू कर दिया है। इसके कारण उनका समाजीकरण एक ऐसे परिवेश में हो रहा है, जो न तो पूर्ण रूप से शहरी है और न ही ग्रामीण। ऐसे में ये बच्चे गाँव और शहर के बीच की परिधि पर खड़े हैं, जहाँ एक साथ दो परिवेश उनके साथ चलते हुए दिखाई देते हैं। मेरे भी कुछ ऐसे निजी अनुभव रहे हैं, जो इस विषय में मेरी रुचि को बढ़ाते हैं।

चूँकि इस प्रकार के विद्यालय बच्चों को आधुनिक बनाने का और उन्हें प्रगतिशील शिक्षा मुहैया कराने का दावा करते हैं। इसलिए हमारे लिए यह अत्यंत आवश्यक हो जाता है कि हम भारत के सन्दर्भ में आधुनिकता के अर्थ को समझें। भारत में अपनाई जाने वाली आधुनिकता को छद्म आधुनिकता कहते हैं। भारत में लोग पश्चिमीकरण को आधुनिकीकरण मान बैठे हैं। आधुनिकता के आधार लक्षणों, जैसे — विवेकपूर्ण तर्क, परानुभूति, भूमिकाओं की सचलता और सक्रियता आदि को लोगों ने नहीं अपनाया। इस कारण भारतीय लोगों की जीवन शैली तो बदली है परन्तु उनकी विचार शैली नहीं बदली। भारतीय लोग सांस्कृतिक औपनिवेशिक बन रहे हैं और बौद्धिक दासता को स्वीकार कर रहे हैं (दुबे, 1985)।

इस शोध के उद्देश्यों को ध्यान में रखते हुए आधुनिक होने के कुछ ही लक्षणों और बिन्दुओं को आधार बनाया गया है जिन्हें निम्न परिभाषाओं से समझा जा सकता है —

'आधुनिकता' का मतलब यह समझ में आता है कि इसके समक्ष सीमित-संकीर्ण-स्थानीय दृष्टिकोण कमज़ोर पड़ जाता है और सार्वभौमिक प्रतिबद्धता और विश्वजनीन दृष्टिकोण (यानी कि समूचे विश्व का नागरिक होना) ज़्यादा प्रभावशाली होता है; इसमें उपयोगिता, गणना और विज्ञान की सत्यता को भावुकता, धार्मिक पवित्रता और अवैज्ञानिक तत्त्वों के स्थान पर महत्व दिया जाता है; इसके प्रभाव में सामाजिक तथा राजनीतिक स्तर पर व्यक्ति को प्राथमिकता दी जाती है, न कि समूह को। इसके मूल्यों के मुताबिक मनुष्य ऐसे समूह/संगठन में रहते और काम करते हैं जिनका चयन जन्म के आधार पर होता है। इसमें भाग्यवादी प्रवृत्ति के ऊपर ज्ञान तथा नियन्त्रण क्षमता को प्राथमिकता दी जाती है और यही मनुष्य को उसके भौतिक तथा मानवीय पर्यावरण से जोड़ता है; इसे अपनी पहचान को चुनकर अर्जित किया जाता है न कि जन्म के आधार पर; इसका मतलब यह भी है कि कार्य को परिवार, गृह और समुदाय से अलग कर नौकरशाही संगठन में शामिल किया जाता है... (रुडोल्फ और रुडोल्फ, 1967)।

गुप्ता (2008) आधुनिकता की चार विशेषताओं का उल्लेख करते हैं —

- व्यक्ति की गरिमा।
- सार्वभौमिक आदर्शों को अपनाना।
- बिना किसी भेदभाव के व्यक्ति की क्षमता के आधार पर उन्नति।
- सार्वजनिक जीवन में उतरदायित्व।

शोध के उद्देश्य

इस शोध के उद्देश्य इस प्रकार हैं —

1. ग्रामीण बच्चों की अस्मिता, व्यक्तित्व और शिक्षा पर औद्योगिकीकरण और शहरीकरण के प्रभावों को समझना।
2. बदलते समाज में ग्रामीण बच्चों की अस्मिता निर्माण की प्रक्रिया को समझना।
3. ग्रामीण पृष्ठभूमि के बच्चों के लिए आधुनिक शिक्षा के मायनों को समझना।
4. ग्रामीण बच्चों की अस्मिता निर्माण में 'अंतर्राष्ट्रीय विद्यालयों' की भूमिका को समझना।

शोध-प्रविधि

गुणात्मक शोध होने के कारण इसमें वर्णात्मक एवं विश्लेषणात्मक अनुसंधान पद्धति का प्रयोग किया गया। शोध के लिए पश्चिमी दिल्ली के हिरनकूदना गाँव को चुना गया। यह क्षेत्र तेज़ी से बदल रहा है और शहर में परावर्तित हो रहा है। यह गाँव लगभग 250 वर्ष पुराना है (स्थानीय लोगों की जानकारी के अनुसार)। इस गाँव की जनसंख्या 5000 के करीब है। इस गाँव में जाट, नाई, खाती, लुहार, मुस्लिम जाट, सुनार, कुम्हार, ब्राह्मण आदि जातियाँ निवास करती हैं। यह गाँव राष्ट्रीय राजमार्ग 10 से लगभग 02 कि.मी. की दूरी पर स्थित है। मुंडका मेट्रो स्टेशन से गाँव की दूरी 4.6 कि.मी. है। इस गाँव के ग्रामीण होने का प्रमाण यह है कि यहाँ के ग्रामीणों को सरकार द्वारा ग्रामीण निवासी का प्रमाण-पत्र प्रदान किया जाता है। क्षेत्र के अधिकतम लोग कृषि पर आश्रित हैं। सबसे महत्वपूर्ण पहलू यह है कि यहाँ

के लोगों ने अपने संस्कारों और रीति-रिवाजों को आज भी बनाकर रखा हुआ है। गुप्ता (2015) ऐसे क्षेत्रों को 'रुर्बन' के वर्ग में शामिल करते हैं।

शोधक को साक्षात्कार के लिए ऐसे दो बच्चों का चयन करना था, जो शोध के उद्देश्यों को प्राप्त करने में सहायक हों। बच्चों का चयन उनकी उम्र, उनके सामाजिक परिवेश और उनके विद्यालय को ध्यान में रखकर किया गया। ये बच्चे 13 या 14 वर्ष के थे और 'इंटरनेशनल स्कूल' में पढ़ते थे। दोनों ही बच्चे नौवीं कक्षा में पढ़ते थे। विभिन्न मनोवैज्ञानिक सिद्धान्त यह मानते हैं कि इस उम्र में बच्चे अपनी अस्मिता का निर्माण करते हैं। इस शोध में अस्मिता का अर्थ बहुत ही सीमित रखा गया, जिसमें इस प्रश्न का उत्तर खोजने का प्रयत्न किया गया है कि "मैं कौन हूँ?" ये बच्चे गाँव में ही रहते हैं और प्रतिदिन विद्यालय आते-जाते हैं। दोनों जगहों का परिवेश एक-दूसरे से बिलकुल विपरीत है। शोध के लिए केवल दो ही बच्चों का चयन किया गया, क्योंकि एम.एड. के दौरान शोध की समयावधि बहुत ही सीमित होती है।

गंगा इंटरनेशनल स्कूल हिरनकूदना गाँव में ही स्थित है। यह स्कूल इस गाँव में एकमात्र निजी स्कूल है और इस क्षेत्र का सबसे बड़ा और प्रसिद्ध स्कूल है। स्कूल का दावा है कि वह एक आधुनिक, प्रगतिशील और बाल-केन्द्रित स्कूल है। स्कूल में हॉस्टल के साथ-साथ वे सभी सुविधाएँ मौजूद हैं जो किसी भी स्कूल को एक आधुनिक या बड़ा स्कूल बनाती हैं, जैसे — प्रत्येक खेल के लिए अलग मैदान, एक विशाल इमारत, प्रशिक्षित अध्यापक और अंग्रेज़ी माध्यम में पढ़ाई। पश्चिम दिल्ली में स्थित यह स्कूल यहाँ के बच्चों को उनके घर और समाज से बिलकुल अलग माहौल प्रदान करता है। इसीलिए शोधक ने इस स्कूल के छात्रों को साक्षात्कार के लिए चुना। इस शोध में अध्ययन के लिए आँकड़ों का संकलन व्यक्तिगत साक्षात्कार के आधार पर किया गया। आँकड़े प्राप्त करने के लिए शोधक द्वारा पहले एक साक्षात्कार अनुसूची बनाई गई। विभिन्न विषय क्षेत्रों के बारे में बच्चों से उनके विचार जानने के लिए अलग-अलग साक्षात्कार किया गया। उन साक्षात्कारों और उनके विचारों को ऑडियो रिकॉर्डर की सहायता से रिकॉर्ड किया गया और साक्षात्कार पूरा होने के पश्चात् शोधक द्वारा उनका अभिलेखन कर सारांश तैयार किया गया। प्राप्त आँकड़ों का सारणीकरण कर विभिन्न विषय बिन्दुओं के आधार पर उनका विश्लेषण एवं विवेचन कर परिणाम प्राप्त किए गए।

विश्लेषण एवं विवेचन

शोधक द्वारा पहले चुने हुए बिन्दुओं और आधुनिकता के अपेक्षित मूल्यों की एक तालिका प्रस्तुत की गई है जिसका उद्देश्य यह दिखाना है कि क्या दोनों बच्चे इन मूल्यों को अपने मानसिक जगत में शामिल कर पाए हैं या नहीं? साहित्य समीक्षा से प्राप्त आधुनिकता के मूल्यों और सीमित समय के कारण शोधक ने कुछ ही बिन्दुओं को विश्लेषण के लिए चुना है।

तालिका 1 — चुने हुए बिंदु एवं आधुनिकता के अपेक्षित मूल्यों पर बच्चों का मत

चुने हुए बिंदु	आधुनिकता के अपेक्षित मूल्य	दीपक*	सुरेश*
जाति	समता	X	X
लिंग-भाव	समता और सम्मान	X	X
महत्वाकांक्षी	स्वीकार्य	✓	✓
श्रम विभाजन	समता और सम्मान	X	X
तार्किकता	स्वीकार्य	X	X
आलोचनात्मक तर्क	स्वीकार्य	X	X
पारम्परिक मूल्य	अस्वीकार्य	X	X
जन्माधारित कार्य	अस्वीकार्य	✓	✓
मिथक, लोककथाएँ	अस्वीकार्य	X	X

*काल्पनिक नाम

तालिका 1 में 'X' उन बिंदुओं की ओर संकेत करता है जिन्हें बच्चा आधुनिकता के अपेक्षित मूल्य के तौर पर अपने जीवन और मानसिक जगत में शामिल नहीं कर पाया है और '✓' उन मूल्यों को दर्शाता है जिन्हें बच्चा अपने जीवन में स्वीकार कर चुका है। तालिका 1 से स्पष्ट है कि आधुनिकता के अपेक्षित मूल्य, जिन्हे बच्चों ने स्वीकार किया, बहुत ही कम हैं, जबकि उन मूल्यों की संख्या अधिक है जिन्हें ये बच्चे अस्वीकार करते हैं। तालिका 1 के आधार पर यह स्पष्ट होता है कि इन बच्चों के मानसिक जगत में एक द्वंद्व है जो इन्हें आधुनिकता के सही मायनों से परे ले जा रहा है।

तालिका 2 में उन बिन्दुओं को इंगित किया गया है जिन पर दोनों बच्चे एक समान सोचते हैं, मामूली अंतर से सोचते हैं या बिलकुल असमान विचार रखते हैं। इसका उद्देश्य यह समझना है कि एक विशेष प्रकार का विद्यालय उन बच्चों के सामाजिक और पृष्ठभूमि से जुड़े अंतरों को प्रभावित कर पाता है या नहीं। इन बच्चों के मानसिक जगत के अंतरों को स्पष्ट करने वाली तालिका 2 इस प्रकार है —

तालिका 2 — चुने हुए बिन्दुओं पर बच्चों के मत

चुने हुए बिंदु	समान	मामूली अंतर	असमान
जाति	✓		
भाषा		✓	
परिवार	✓		
परम्परा	✓		
आदतें			✓
पसंद या नापसंद			✓
आदर्श		✓	
तकनीक		✓	
लिंग-भाव	✓		
श्रम विभाजन	✓		
लक्ष्य			✓
ग्रामत्व		✓	
आधुनिकता		✓	
मित्रता			✓
विज्ञान			✓
मिथक, लोककथाएँ	✓		

तालिका 2 इस बात को स्पष्ट करती है कि ये दोनों बच्चे उन मुद्दों पर समान विचार रखते हैं जो उनके परिवार, संस्कृति और प्राथमिक सामाजीकरण से जुड़े हुए हैं। जिन बिन्दुओं पर ये अलग-अलग सोचते हैं, उन बिन्दुओं पर स्कूल का प्रभाव देखा जा सकता है। कुछ बुनियादी अवधारणाओं, जैसे — जाति, लिंग-भाव, परिवार, श्रम विभाजन आदि पर स्कूल कोई खास प्रभाव नहीं डाल सका है।

परिवार

भारतीय समाज में परिवार एक महत्वपूर्ण संस्था है और बच्चे परिवार में ही अपना आदर्श ढूँढ़ने का प्रयत्न करते हैं (कक्कड़, 1978)। दीपक एकल परिवार और सुरेश संयुक्त परिवार में रहता है, लेकिन दोनों की पसंद संयुक्त परिवार है। दीपक का मानना है कि संयुक्त परिवार में हँसी-मज़ाक से समय बीत जाता है और काम का बँटवारा होने से आसानी होती है। सुरेश कहता है कि संयुक्त परिवार में दादा-दादी की सेवा करने का मौका मिलता है। दीपक अपने चाचाजी के लड़के से अत्यंत प्रभावित है और उसी जैसा बनना चाहता है। दूसरी ओर सुरेश अपने पिताजी से काफ़ी प्रभावित है।

जब समाज शहरीकरण और औद्योगिकीकरण की प्रक्रिया से गुज़रता है तो स्वाभाविक तौर पर संयुक्त परिवार की अवधारणा ढीली पड़ने लगती है (दुबे, 1985)। तेज़ी से बदलते गाँव की एक विशेषता एकल परिवार भी है। लेकिन इस शोध में पाया गया कि ये बच्चे संयुक्त परिवार की चाह रखते हैं और इतना ही नहीं, वे अपने बड़े-बुजुर्गों में अपने आदर्श ढूँढ़ते हैं। परिवार बच्चों के विचारों को काफ़ी हद तक प्रभावित करता है और छोटे-से-छोटे निर्णय लेने के लिए बच्चों को अपने परिवार पर निर्भर रहना पड़ता है। हालाँकि इस अंतर्राष्ट्रीय स्कूल में हॉस्टल की सुविधा है, परन्तु ये बच्चे अपने घर से ही स्कूल जाते हैं। स्कूल जाने के साथ-साथ ये बच्चे अपने परिवार से अलग नहीं हुए हैं। कृष्ण कुमार (1999) भी अपने एक लेख में इस बात को स्वीकार करते हैं कि परिवार बच्चों के लक्ष्यों, उनकी आदतों और अपेक्षाओं को निर्धारित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है (सरस्वती, 1999)।

पारंपरिक मूल्य

सुरेश और दीपक, दोनों ही अपने पारंपरिक विश्वासों और मान्यताओं में आस्था रखते हैं। एक प्रश्न के उत्तर में दीपक ने कहा कि, मैं भगवान राम के जैसा बनना चाहूँगा, क्योंकि वे अपने माता-पिता की बात मानते थे और उसी सवाल के जवाब में सुरेश का उत्तर हनुमान था, क्योंकि वे सच्चे सेवक और स्वामीभक्त थे। दोनों ही इन मूल्यों को अपने जीवन में शामिल करना चाहते हैं। दोनों ही बच्चों के आदर्श धर्म से जुड़े हुए हैं और एक मिथक से आए हैं। इससे पता चलता है कि एक 'अंतर्राष्ट्रीय' कहे जाने वाले स्कूल में पढ़ने के बावजूद उन बच्चों पर धार्मिक आस्था और मान्यताओं का प्रभाव बना हुआ है।

वे बिना प्रश्न किए उन विश्वासों को स्वीकार करते हैं। कई दस्तावेज़ो, नीतियों (*राष्ट्रीय पाठ्यचर्या रूपरेखा 2005*) में इस बात को स्वीकार किया गया कि आधुनिक शिक्षा का एक उद्देश्य बच्चों में आलोचनात्मक सोच और प्रश्न करने की क्षमता विकसित करना है, परन्तु इन बच्चों का साक्षात्कार इस बात की ओर संकेत करता है कि ये अंतर्राष्ट्रीय स्कूल (जो ऐसे उद्देश्यों को साथ लेकर चलने का दावा करते हैं) भी इन उद्देश्यों को प्राप्त नहीं कर पा रहे हैं। अपने बड़ों की बातों को मानना और बिना प्रश्न किए उन्हें अपने जीवन में उतार लेना, भारतीय ग्रमीण समाज की एक विशेषता रही है (श्रीनिवास, 1967)। उन बच्चों के इस विश्वास में घर-परिवार के संस्कार और उनका प्रभाव बहुत ही महत्वपूर्ण है।

इस मूल्य को बच्चों में बनाए रखने में परिवार, समाज, स्कूल आदि के अलावा कुछ ऐसी संस्थाएँ भी सहायक हैं, जो उनसे प्रत्यक्ष रूप से जुड़ी हुई नहीं हैं। इसमें राजनीतिक गतिविधियाँ और मीडिया शामिल है। बच्चे अकसर टेलीविज़न पर ऐसे कार्यक्रम देखते हैं, जो इन मूल्यों को पुष्ट करते हैं और उनकी मानसिकता पर एक गहरा प्रभाव भी छोड़ते हैं।

तकनीक

दोनों बच्चे तकनीक और उससे जुड़ी सुविधाओं को जीवन के लिए ज़रूरी मानते हैं। जहाँ तक विज्ञान के महत्व का प्रश्न है तो दीपक का मानना है कि विज्ञान हमारे जीवन को आसान बनाता है और हमारे भविष्य को बेहतर बना सकता है। सुरेश कहता है कि विज्ञान हमें सुविधाएँ प्रदान करता है और हमें चीज़ों के होने का कारण भी बताता है। लेकिन दोनों का यह भी मानना है कि विज्ञान से मिले मोबाइल और कंप्यूटर हमें अपने परिवार से अलग भी करते हैं। ये बच्चे तकनीक को एक बाधा के रूप में देखते हैं। वे कहते हैं कि बच्चे अपना ज़्यादा समय कंप्यूटर और मोबाइल पर बिताते हैं और अपने परिवार को कम समय दे पाते हैं। दोनों का मानना है कि बच्चों को एक निश्चित उम्र के बाद ही कंप्यूटर और मोबाइल देना चाहिए। बच्चे इन उपकरणों का दुरुपयोग भी करते हैं। यह गंभीर विषय है कि एक तरफ़ तो ये बच्चे तकनीक से जुड़ना चाहते हैं और दूसरी ओर इसके प्रयोग से पारिवारिक संबंधों में आ रहे परिवर्तन को भी स्वीकार नहीं करना चाहते। यह एक अंतर्विरोध है, जो गाँव में रहने वाले बच्चों में ही मिलेगा, शहर में रहने वाले बच्चों में ऐसा द्वंद्व शायद ही देखने को मिले।

आज के समय में कंप्यूटर एवं इंटरनेट बच्चों की पढ़ाई के लिए बहुत आवश्यक माना जाने लगा है और इस बात की पुष्टि कई दस्तावेज़ करते हैं तथा ऐसे अंतर्राष्ट्रीय स्कूल भी तकनीक और इंटरनेट जैसी सुविधाओं पर ज़ोर देते हैं। गाँव में अपनी अस्मिता का निर्माण कर रहे बच्चों में ये परिवर्तन एक विरोधाभास उत्पन्न कर रहे हैं। जैसा कि जॉनसन (2005) और श्रीनिवास (2000) कहते हैं कि भारत में लोग आधुनिकता को कुछ हद तक ही स्वीकार करते हैं। ऐसे ही कुछ विरोधाभास तकनीक और आधुनिकता को लेकर इन बच्चों में दिखाई देते हैं। ये बच्चे मशीनों के प्रयोग को आवश्यक मानते हैं, परंतु इनके कारण मूल्यों में आए परिवर्तन उन्हें स्वीकार्य नहीं हैं, जैसे — साक्षात्कार में शोधार्थी ने एक प्रश्न में दोनों बच्चों से ऐसा उदाहरण बताने के लिए कहा, जहाँ उन्होंने तकनीक के कारण परिवार में कोई परिवर्तन देखा हो। इसके जवाब में दीपक ने बताया कि उसके पड़ोस में एक लड़का है, जो कंप्यूटर पर काफ़ी समय बिताता है। इसी वजह से वह न तो घर का कोई काम कर पाता है और न ही घरवालों के साथ समय बिता पाता है। इससे पता चलता है कि ये बच्चे इन बदलावों और उनके प्रभावों को अपने जीवन और आस-पास के समाज में न केवल देखते हैं, बल्कि उन्हें अपने जीवन में शामिल भी कर रहे हैं। इससे यह तो

स्पष्ट है कि वे मशीन और तकनीक को इस प्रकार प्रयोग करने में विश्वास करते हैं कि उनसे उनके सामाजिक और आपसी सम्बन्ध किसी प्रकार प्रभावित न हो सकें। यह एक बड़ा अंतर्विरोध है जिसे गाँव के बच्चे अपने साथ लेकर चल रहे हैं, जो उन्हें आज के समय में तो प्रभावित कर ही रहा है, साथ ही भविष्य में भी उनके लिए बाधा उत्पन्न कर सकता है।

लैंगिक विचारधारा

दीपक के अनुसार लड़कियों को घर से बाहर नहीं जाना चाहिए। वह अपने चाचाजी के लड़के से इसीलिए प्रभावित है, क्योंकि उसकी सोच उसके दादाजी और पिताजी जैसी ही है। दीपक का यही मानना है कि लड़कियों को ज़्यादा छूट नहीं देनी चाहिए। सुरेश की सोच भी दीपक से कुछ ज़्यादा अलग नहीं है। उसके अनुसार भी लड़कियों के कुछ निश्चित क्षेत्र हैं, जिनसे उन्हें बाहर नहीं जाना चाहिए। सामाजिक स्थान या घर से बाहर जाने से लड़कियों को रोकना चाहिए। भारतीय समाज लड़कियों को घर और परिवार की इज़्ज़त से जोड़कर देखता है। उन पर कुछ विशेष नियम लागू होते हैं (दुबे, 2004)। इसके अलावा सुरेश का कहना है कि बाहर जाना लड़कियों के लिए सुरक्षित नहीं है। समाज में कुछ ऐसे तत्व हैं जिनसे लड़कियों को खतरा रहता है। दीपक का कहना है कि लड़कियों को अपने घर वालों की हर बात मान लेनी चाहिए। दीपक लड़कियों का किसी बारात में जाना भी गलत मानता है। दीपक और सुरेश, दोनों ही किसी लड़की को अपना दोस्त नहीं बनाना चाहते। उनके अनुसार लड़कों को लड़कियों से दोस्ती नहीं करनी चाहिए।

एक अन्य प्रश्न में दीपक ने कहा कि वह अपनी माँ और बहन को उपहार में सूट देना चाहेगा। अपने पिताजी को फोटो फ्रेम और भाई को एयर मैक्स के जूते। इसी प्रश्न के जवाब में सुरेश ने पिताजी को मिठाई और माँ को कॉस्मेटिक का सामान देने की इच्छा व्यक्त की। वह बहन को चॉकलेट देना चाहता है। इन विचारों से साफ़ है कि महिलाओं के लिए कुछ निश्चित सामान ही हैं जो उन्हें दिए जा सकते हैं। जबकि भाई और पिता के लिए ज़्यादा विकल्प होते हैं जिनमें उनकी पसंद और ज़रूरत, दोनों का ध्यान रखा जाता है।

लगभग हर शिक्षा संबंधी दस्तावेज़ (कोठारी आयोग, 1964–66; *राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005*) इस बात को स्वीकार करता है कि लड़कियों के साथ हो रहे भेदभाव को समाप्त करना ज़रूरी है। लैंगिक आधार पर समानता आधुनिकता की एक महत्वपूर्ण अवधारणा भी है, जोकि इन बच्चों के विचारों से विपरीत है। जोधका (2012) ने अपने शोध में पाया कि 20 साल पहले भी सामाजिक स्थानों पर औरतों का जाना निषेध था और 20 साल बाद भी स्थिति वैसी ही है। दीपक और सुरेश भी लड़कियों के बारे में वही विचार रखते हैं, जोकि समाज में पहले से चले आ रहे हैं। ये 'इंटरनेशनल' कहे जाने वाले स्कूल बच्चों के इन विचारों को प्रभावित नहीं कर पा रहे हैं और ना ही उनमें ऐसी सोच विकसित कर पा रहे हैं जिससे वे

अपने परिवार के लोगों से इन पारम्परिक विचारों पर प्रश्न कर सकें।

श्रम विभाजन

एक प्रश्न के ज़रिये शोधक ने यह जानने का प्रयत्न किया कि श्रम के बँटवारे को लेकर दोनों बच्चों के क्या विचार हैं? दीपक और सुरेश दोनों का मानना है कि पहले से कुछ कार्य-क्षेत्र लड़कियों के लिए निश्चित हैं और उन्हें उस दायरे से बाहर काम नहीं करना चाहिए। वे कहते हैं कि लड़कियों को घर के बाहर के काम नहीं करने चाहिए। उन्हें घर के अंदर के काम, जैसे — साफ़-सफ़ाई, खाना बनाना और पढ़ाई ही करनी चाहिए। घर के बाहर के काम लड़कों को ही करने चाहिए। लड़कियों को खेल भी ऐसे खेलने चाहिए जो घर के अन्दर ही खेले जा सकें।

एक अन्य प्रश्न जिसमें प्रक्षेपण विधि का प्रयोग कर उन बच्चों से जानने का प्रयत्न किया गया कि श्रम विभाजन को लेकर उनकी विचारधारा क्या है? दीपक ने कहा कि अगर उसे बाहर की किसी यात्रा को आयोजित करने का मौका मिलेगा, तो वह गाड़ी चलाने और सलाह देना का काम अपने चाचाजी के लड़के को देगा। उसके अनुसार वह पिताजी को कोई काम नहीं देगा। माँ को खाना बनाने का काम देगा और यात्रा के दौरान चीज़े सँभालने और सफ़ाई का काम अपनी बहनों को देगा। इसी प्रश्न के उत्तर में सुरेश ने भी इसी से मिलते-जुलते जवाब दिए। उसने गाड़ी चलाने का काम पिताजी को दिया और सलाह देने का काम अपने दादाजी को दिया। माँ को खाना बनाने का काम दिया।

हमारे समाज में औरत को कुछ निश्चित कार्य करने की ही अनुमति है या उन्हें वहीं निश्चित काम करने के लायक माना जाता है (दुबे, 2004)। उनकी क्षमता और कार्यशक्ति पर हमारा पितृसत्तात्मक समाज हमेशा संदेह करता रहा है। इन दोनों बच्चों के विचारों में कोई नवीनता नहीं है। उन्हें यही लगता है कि औरतों को कुछ निश्चित काम ही करने चाहिए। सरकारी नीतियों और आधुनिकता की अवधारणा के तौर पर यह आवश्यक है कि ये बच्चे श्रम विभाजन की इस पारम्परिक विचारधारा को नकारें। जिस स्कूल में ये बच्चे पढ़ रहे हैं, वो भी इन बच्चों के विचारों को बदलने में असफल रहा है। लेकिन जहाँ तक आधुनिकता का प्रश्न है, इनके विचारों में ऐसी कोई आधुनिकता नहीं है, क्योंकि आधुनिकता विचारों में समानता और दूसरों के लिए सम्मान की माँग करती है (गुप्ता, 2008) और जिसका दावा ये 'इंटरनेशनल स्कूल' भी करता है।

जाति

इस विषय पर स्पष्ट जवाब मिलना एक जटिल काम था। दोनों ही जाति के नाम पर होने वाले भेदभाव को गलत मानते हैं। यह उनकी इस विषय पर पहली प्रतिक्रिया थी। परन्तु एक अलग प्रश्न में दोनों के ही विचारों में काफ़ी विरोधाभास लगा। दीपक का मानना है कि जाति जैसे मामलों में हमें अपने परिवार के लोगों की बात सुननी चाहिए। एक अलग प्रश्न में दीपक का कहना था कि जाति की समझ एक निश्चित उम्र के बाद आती है और उस उम्र तक पहुँचने से पहले बच्चे कोई गलती करते हैं तो उन्हें माफ़ कर देना चाहिए। इस प्रश्न पर सुरेश का मानना

है कि बड़े-बुजुर्गों को ऐसे मामलों में सतर्क रहना चाहिए, छोटे बच्चे जाति के नियमों को नहीं जानते।

ऐसे मामलों में लगता है कि दीपक और सुरेश दोनों ही किसी ऐसी दुविधा में फंसे हुए है, जिसमें उनके पास कोई एक निश्चित जवाब नहीं है। वे जाति व्यवस्था को गलत नहीं मानते, परंतु जाति के आधार पर हो रहे भेदभाव को गलत मानते हैं। दोनों बच्चों को यह भेदभाव बुरा लग रहा है, जो उनके आधुनिक हो जाने का संकेत है, परंतु जाति व्यवस्था में उनका विश्वास बना हुआ है, यह अंतर्द्वंद्व बहुत गंभीर है। ये द्वंद्व उनके स्कूल और सामाजिक परिवेश में अंतर की वजह से हो सकते हैं। ऐसे विरोधाभास बच्चे की अस्मिता को बहुत प्रभावित करते हैं, क्योंकि वे सही दिशा और निश्चित कदम तय नहीं कर पाते। स्कूल में दिए जाने वाले विचार घर पर मिले अनुभवों और मूल्यों से काफ़ी अलग होते हैं, जिनमें बच्चा सिर्फ़ उलझकर रह जाता है और कुछ कर नहीं सकता। जाति व्यवस्था में उनका विश्वास बना हुआ है, जो इस बात का संकेत है कि शिक्षा का उन बच्चों की उस बुनियादी विचारों की दुनिया पर कोई विशेष प्रभाव नहीं पड़ सका है।

ग्रामत्व

दीपक और सुरेश, दोनों को ही गाँव में रहना पसंद है। उन्हें गाँव की यह विशेषता अच्छी लगती है कि गाँव में सब लोग एक-दूसरे को जानते हैं। वे लोग मुसीबत में एक-दूसरे की सहायता भी करते हैं। उनका मानना है कि शहरों में ऐसा कुछ भी नहीं है। लोग शहरों में अपने ही जीवन में व्यस्त रहते हैं। दीपक का कहना है कि शहरों में खान-पान अच्छा नहीं है। वहाँ के कुछ बच्चे फ़ास्ट फूड पर ज़्यादा निर्भर रहते हैं, जबकि गाँव में खाना अच्छा मिलता है और दूध-दही से सेहत भी अच्छी रहती है। उनका कहना है कि शहर के बच्चों की सेहत और शारीरिक क्षमता गाँव के बच्चों की अपेक्षा कम होती है। ग्रामत्व की यह भावना इन दोनों बच्चों की मानसिकता को भी प्रभावित करती है। उनके अनुसार गाँव के लोग काफ़ी सरल और सीधे होते हैं, जबकि शहरों में लोग चालाक होते हैं। दोनों ही अपना गाँव नहीं छोड़ना चाहते।

दीपक और सुरेश, दोनों ही शहरों को आधुनिक मानते हैं और गाँव को पिछड़ा बताते हैं। वहीं, दोनों आधुनिकता को आज की एक अहम ज़रूरत भी मानते हैं, लेकिन दोनों ही गाँव को छोड़ने से इनकार भी करते हैं। गाँव के प्रति लगाव और शहरों की चाह इन बच्चों को एक ऐसी जगह लाकर खड़ा कर देती है, जहाँ ये न तो गाँव छोड़ने की सोच सकते हैं और न ही शहरों में जाने का मन बना सकते हैं। ऐसी परिस्थितियाँ बच्चों में एक प्रकार का द्वंद्व पैदा कर देती हैं, जिससे वे बिना सोचे-समझे किसी के प्रति अपनी धारणा बना लेते हैं। ये दोनों ही बच्चे दो अलग-अलग दुनिया में रह रहे हैं। इनकी दुनिया कौन-सी है और ये किस दुनिया का हिस्सा बनना चाहते हैं? ऐसे प्रश्नों पर ये दोनों ही बच्चे निरुत्तर हैं। दोनों दुनिया को एक साथ लेकर चलना इन बच्चों में एक द्वंद्व पैदा कर रहा है।

आधुनिकता

उपरोक्त बिंदु से यह स्पष्ट है कि दोनों ही बच्चे गाँव के प्रति एक विशेष लगाव रखते है, लेकिन

जब उनसे पूछा गया कि आप अपने गाँव में कौन-से बदलाव चाहते हैं? तो इस पर उनके जवाब काफ़ी चौंकाने वाले थे। वैसे तो एक तरफ़ उन्हें गाँव पसंद है और शहरों को वे अच्छा नहीं मानते, परंतु जहाँ तक गाँव में बदलाव का प्रश्न है तो उन्हें गाँव में फ़ूड फ़ैक्ट्री, अच्छे शो-रूम और सिनेमा हॉल चाहिए। ये सुविधाएँ किसी जगह को शहर का रूप देती हैं। इतनी सुविधाएँ हो जाने के पश्चात् गाँव शायद गाँव न रहे, वह शहर बन जाए, परंतु इन दोनों बच्चों की नज़र में उनका गाँव शहर नहीं बनेगा। इस प्रकार दोनों ही बच्चे शहर में रहने से मना कर रहे हैं, परंतु शहर की विशेषताओं को अपने गाँव में लाना चाहते हैं।

दीपक और सुरेश, दोनों ही आधुनिकता को सिर्फ़ बड़ी इमारतों और सुविधाओं से जोड़कर देखते हैं। गाँव में वे दोनों भौतिक रूप से तो परिवर्तन चाहते हैं, परंतु अपनी विचारधारा, अपनी सोच और अपने मूल्यों में किसी प्रकार के परिवर्तन को स्वीकार नहीं करते। शहरों की बड़ी इमारतों और फ़ूड फ़ैक्ट्रियों को अपने गाँव में तो लाना चाहते हैं और यह भी मानते हैं कि इनके आने से उनके गाँव में कोई फ़र्क नहीं पड़ेगा। गाँव वैसा ही रहेगा, जैसा वह आज तक रहा है। इन्हीं विचारों से यह अनुमान लगाया जा सकता है कि इन बच्चों ने आधुनिकता का बहुत सीमित और संकुचित अर्थ समझा है और गाँव को बस कुछ ही बिन्दुओं से जोड़कर देखते हैं। इन बच्चों की मानसिकता में एक तरह का रूढ़िवाद घर कर गया है, जिसके कारण ये बच्चे गाँव को एक निश्चित नज़रिए से ही देखते हैं।

निष्कर्ष

सामाजिक परिवर्तन एक स्वाभाविक और निरंतर चलने वाली प्रक्रिया है। शहरीकरण और आधुनिकीकरण ने भारतीय गाँव का स्वरूप बहुत हद तक बदला है, लेकिन यह परिवर्तन अधिकांशत: भौतिक रूप तक ही सीमित लगता है। बड़ी इमारतों का बनना, बड़े शो-रूम का आना, इंटरनेट तक पहुँच, यातायात जैसी सुविधाओं का विस्तार होना, आदि को ही आधुनिकीकरण समझा जाता है (गुप्ता, 2002)। लोग आधुनिकता को अब तक अपने मूल्यों में नहीं ला पाए हैं।

परिवार और पारिवारिक सम्बन्ध आज भी उतने महत्वपूर्ण हैं, जितने पहले हुआ करते थे। बच्चों के लक्ष्यों, अपेक्षाओं, पसंद या नापसंद और अस्मिता को परिवार का वातावरण बहुत ही प्रभावित करता है। परिवार से मिले मूल्य और संस्कार बच्चों के लिए अहम भूमिका अदा करते हैं। इन्हीं मूल्यों और संस्कारों के साथ बच्चे स्कूल (जोकि घर और समाज से एक अलग परिवेश है) में जाते हैं। बच्चे एक निश्चित आयु के बाद भी छोटे-छोटे निर्णयों के लिए अपने परिवार और बड़ों पर निर्भर रहते हैं, इस मत को ठुकराया भी नहीं जा सकता, क्योंकि समय-समय पर समाजशास्त्री इस बात को अपने शोध कार्यों में स्वीकार कर चुके हैं। इसका बच्चों की अस्मिता पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है। वे न तो आत्मविश्वासी बन पाते हैं और न ही विषम परिस्थितियों में कोई निर्णय ही ले पाते हैं। यह इस आधुनिक कहे जाने वाली शिक्षा का एक दोष है कि बच्चे न तो सवाल करना सीख सके हैं और न ही आलोचनात्मक बन सके हैं।

ये दोनों बच्चे दो अलग दुनिया में चल रहे हैं और जहाँ इन दो दुनियाओं का मिलन होता है या इन दोनों में से इन्हें किसी एक को चुनना होता है, तो ये उस दुनिया के साथ होते हैं जो इनके बुनियादी ढाँचों की दुनिया होती है। अर्थात्, ये अपने परिवार और समाज से मिले संस्कारों के साथ होते हैं। जाति, लिंग-भाव और लिंग के आधार पर ही कार्य-क्षेत्र का बंटवारा आदि पर इन बच्चों की वही सोच है, जोकि इनके परिवार ने इनमें विकसित की है। यह भी सत्य है कि प्राथमिक समाजीकरण की छाप इतनी आसानी से नहीं जाती, लेकिन आधुनिक स्कूल इस बात का भी दावा करते हैं कि बच्चों के विचारों में नवीनता और आधुनिकता का विकास करेंगे। 'इंटरनेशनल स्कूल' इस दावे को पूरा नहीं कर पा रहे हैं।

ये आधुनिक और 'इंटरनेशनल स्कूल' बच्चों के समाज से एकदम कटे होते हैं। बच्चों को समाज से हटकर शिक्षा देना उन बच्चों की अस्मिता को इस प्रकार प्रभावित करता है कि बच्चे सही निर्णय नहीं ले पाते और न ही अपने आपको किसी एक वर्ग में रख पाते हैं। इस तरह के द्वंद्वों का सामना पूरी ज़िन्दगी करना पड़ता है। स्कूल और घर पर अलग-अलग जीवन जी रहे ये बच्चे न तो अपने लक्ष्य निर्धारित कर पाते हैं और न ही सफल हो पाते हैं, केवल औसतन जीवन जीने पर मजबूर हो जाते हैं। वे न तो गाँव के ही बन पाते हैं और न ही आधुनिकता के प्रतीक कहे जाने वाले शहर से जुड़ पाते हैं।

जहाँ तक इन बच्चों के असमान विचारों का सम्बन्ध है, इनमें केवल उन्हीं विचारों में असमानता है जो बहुत ही सतही हैं, जैसे — क्या बोलना है, कितना बोलना है, कैसे बोलना है? या कैसे सामान खरीदना है और कहाँ से खरीदना है? किस कंपनी के कपड़े या जूते अच्छे हैं? ये क्षेत्र उनकी बुनियादी समझ से जुड़े नहीं हैं। इन पर केवल उनको मिलने वाली सुविधाओं और उपलब्धियों का प्रभाव मात्र है, जोकि समय के साथ-साथ बदलता रहता है। यह कहना गलत नहीं होगा कि ये स्कूल बच्चों के बुनियादी विचारों को प्रभावित करने में असमर्थ रहे हैं। उनका जो प्रभाव बच्चों पर है, वह केवल सतही है।

सामाजिक परिवर्तन के क्षेत्र में पहले काफ़ी शोध कार्य हो चुका है। यह शोध एक छोटा-सा योगदान है। शहरीकरण तेज़ी से बढ़ रहा है और शायद ही भारत का कोई ऐसा हिस्सा हो जो शहरीकरण से अछूता हो। यह शोध उसी दिशा में लोगों, शिक्षाविदों और नीति-निर्माताओं का ध्यान आकर्षित करने का उद्देश्य भी रखता है। जो स्कूल बच्चों के परिवेश से कटकर उन्हें शिक्षा प्रदान कर रहे हैं, उनका प्रसार रोका जाना चाहिए। जो स्कूल खुल चुके हैं, उन पर नई नीतियाँ बनाकर उनकी पाठ्यचर्या और नियमों में बदलाव करना चाहिए।

बच्चों का आगामी जीवन उनकी अपेक्षाओं, आत्मविश्वास और लक्ष्यों पर निर्भर करता है, परंतु ऐसा माहौल जो उन्हें द्वंद्व की स्थिति में लाकर खड़ा कर दे, उनके भविष्य के लिए सुरक्षित नहीं है। समाज और परिवार के विचार और संस्कार बच्चों में लम्बे समय तक विद्यमान रहते हैं, उस परिवेश से हटकर उन्हें पढ़ाना सुरक्षित नहीं है। आधुनिकता को सही अर्थों में समझकर बच्चों तक पहुँचाने का काम स्कूल का है, उसके लिए

स्कूल को प्रयासरत रहना चाहिए। शिक्षा आधुनिकीकरण का एक सशक्त साधन हो सकती है। मूल्यों और दृष्टिकोणों में परिवर्तन शिक्षा के माध्यम से सरल बनाया जा सकता है। इसके लिए यह ज़रूरी है कि आधुनिक और प्रगतिशील कहे जाने वाले स्कूल शिक्षा के विचारों में सकारात्मक परिवर्तन लाएँ, न कि उन्हें किसी प्रकार के अंतर्द्वंद्व में धकेल दें।

संदर्भ

एल्किंड, डेविड. 1974. *चिल्ड्रेन एंड अडोलिसेंस*. ऑक्सफ़ोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, न्यूयॉर्क.

कक्कड़, एस. 1978. *इनरवर्ल्ड — ए साइकोएनालिटिक स्टडी ऑफ़ चाइल्डहुड एंड सोसायटी इन इंडिया*. ऑक्सफ़ोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस., दिल्ली.

कुमार, कृष्ण. 1999. चिल्ड्रेन एंड एडल्ट्स – रीडिंग एन ऑटोबायोग्राफी. संपादन में सरस्वती, टी. एस. 1999. *कल्चर, सोशलाईज़ेशन एंड ह्यूमन डेवलपमेंट*. सेज पब्लिकेशन्स, नयी दिल्ली. पृ. 45 – 61.

क्रेसवेल, जे. डब्ल्यू. 2012. *एजुकेशन रिसर्च. – पी.एच.आई*. लर्निंग प्राइवेट लिमिटेड, नयी दिल्ली.

गुप्ता, दीपांकर. 1991. *सोशल स्ट्रेटिफ़िकैशन*. ऑक्सफ़ोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, नयी दिल्ली.

———. 2000. *द मिसटेकन मॉडर्निटी*. हार्परकालिंस पब्लिकेशन, नयी दिल्ली.

———. 2008. *द चेंजिंग विलेजर*. सेमिनार 589. पृ. 47–50. दिसंबर 2008 को www.india-seminar.com/2008/589/589-dipankar-gupta.html से लिया गया है.

———. 2015. *दी इम्पोर्टेंस ऑफ़ बीइंग रुर्बन. ई.पी.डब्ल्यू*. वॉल्यूम 24. पृ. 37–43.

जॉनसन, क्रिक. 2005. ग्लोबलाइज़ेशन एट दी क्रॉसरोड्स ऑफ़ ट्रेडिशन एंड मॉडर्निटी इन रूरल इंडिया. *सोशियोलॉजिकल बुलेटिन*. 54. न. 1 जनवरी-अप्रैल अंक. इंडियन सोशियोलॉजिकल सोसाइटी. पृ. 40 –58.

दुबे, श्यामाचरण. 1985. *भारतीय समाज*. नेशनल बुक ट्रस्ट, नयी दिल्ली.

———. 2005. *समय और संस्कृति*. वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली.

———. 2008. *परम्परा और परिवर्तन*. ज्ञानपीठ, नयी दिल्ली.

बेते, आंद्रे. 2002. *सोशयोलॉजी*. ऑक्सफ़ोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, नयी दिल्ली.

बैस्ट, जे. डब्ल्यू और कोहन, जे.वी. 2008. *रिसर्च एजुकेशन*. प्रेन्टिस हॉल ऑफ़ इंडिया, नयी दिल्ली.

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्. 2006. *राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा 2005*. रा.शै.अ.प्र.प., नयी दिल्ली.

रुडोल्फ और रुडोल्फ. 1967. *द मॉडर्निटी ऑफ़ ट्रेडिशन — पॉलिटिकल डेवलपमेंट इन इंडिया*. यूनिवर्सिटी ऑफ़ शिकागो प्रेस, शिकागो.

श्रीनिवास, एम. एन. 1967. *आधुनिक भारत में सामाजिक परिवर्तन*. राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली.

———. 2000. *भारत के गाँव*. राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली.